Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 9, June-2019, ISSN 2230-7540

वैदिक परम्परा में गुरू-शिष्य सम्बन्ध

Dr. Parveen Kumar*

Assistant Professor, D.A.V. College, Pehowa, Kurukshetra

सारांश - *वेद मानवधर्म तथा समस्त सत्य विद्याओं के आदिम स्रोत हैं। मनुष्यमात्र के सम्पूर्ण विकास के लिए वैदिक आचार्यों ने संस्कारों की संकल्पना की है। संस्कार शिक्षा की आधारभूमि है। मानव की पूर्णता में जो आरम्भिक योजना है उसे वैदिक साहित्य में संस्कार कहा गया है। संस्कार का अर्थ है-सतत परिष्कार अर्थात् प्रगतिशीलता। इस प्रगतिशीलता के विकास का सर्वाधिक अवकाश मनुष्य जन्म में ही सम्भव है। पुत्र या पुत्री का जन्म चाही-अनचाही आकस्मिक प्रक्रिया नहीं है। यह एक सुनियोजित उत्तरदायित्व है- प्रजातन्तुं मा व्यवच्छेत्सीः। इस संस्कार प्रक्रिया का आरम्भ गर्भाधान संस्कार के रूप में होता है। तत्पश्चात् पुंसवन, और सीमन्तोन्नयन संस्कारों से माता-पिता जन्म से पूर्व ही बालक की शिक्षा के लिए पृष्ठभूमि तैयार कर देते हैं। इतना ही नहीं, अब जन्म के पश्चात् जातकर्म संस्कार आया तो पिता पुत्र की मेधा के लिए कामना करता है। तत्पश्चात् नामकरण काल में पिता पुत्र के कान में यह मंत्र बोलता है कि-कोऽसि कतमोऽसि कस्यासि और यह संस्कार डालना आरम्भ करता है कि हे बालक तुझे यह जानना है कि तू कौन है आदि।*

----------X----------

भूमिका

संसार में अज्ञानान्धकार में भटकते मनुष्य को सदा ही सद्गुरुप्राप्तिहेतु प्रयत्नशील रहना चाहिए। हमारा इतिहास इस बात का साक्षी है कि मानव-जीवन को वही व्यक्ति सार्थक कर सका है, जिसे सद्गुरु का सान्निध्य प्राप्त हुआ तथा जिसमें गुरुभक्ति कूट-कूटकर भरी हो; क्योंकि सद्गुरु की प्राप्ति हो जाने पर भी गुरु के प्रति सच्ची भक्ति और निष्ठा के बिना मनुष्य को जीवन का रहस्य एवं सच्चा ज्ञान प्राप्त नहीं होता। अपने मर्यादा-पालन से लोक-मर्यादा का सच्चा उदाहरण प्रस्तुत करने वाले मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम, प्रेम का अलख जगाने वाले भगवान् श्रीकृष्ण, धनुर्विद्या के बल पर किरातवेशधारी भगवान् शंकर से भी प्रतिद्वन्द्विता करने वाले गाण्डीवधारी अर्जुन, ऐसे अर्जुन को भी चुनौती देने वाला एकलव्य, शहंशाह बनकर भी सच्ची शहंशाही की प्राप्ति के लिए गुरु-शरण में जाने वाले बादशाह सिकन्दर, निखिल जगत् को निर्गुण की शिक्षा देने वाले सन्त कबीर अथवा दुनिया को साधुता एवं फकीरी की शिक्षा देने वाला कोई भी साधु अथवा फकीर सबके लिए सर्वस्वसिद्धि एवं सफलता का एक ही मार्ग रहा है-'गुरुभक्ति'। शास्त्र भी इस बात की पुष्टि करता है कि समुचित साधना के बिना सिद्धि नहीं है और साधना के दुर्गम मार्ग में सद्गुरु की शरण अथवा कृपा के बिना कोई गति नहीं है।

सनातन धर्म की पुनीत परम्पराओं में यद्यपि अनेक परम्पराएं मानव को सदा से कल्याण के मार्ग पर चलाती आ रही हैं, परन्तु गुरु-शिष्य परम्परा सदानीरा माँ भागीरथी की तरह युगों-युगों से धर्म-परायण जनता का मार्गदर्शन कर रही है। इस पवित्र और सनातन परम्परा का मानस-पटल पर चिंतन होते ही ऐसा सुन्दर और विराट दर्शन होता है कि वो ज्ञानसागर में निमज्जन करने वाले शिष्य कितने पुण्यात्मा और बड़भागी रहे होंगे जिन्होंने अहर्निश अपने गुरुजनों की सेवा कर उस ज्ञान-वारिधि से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी रत्नों की प्राप्ति कर अपने जीवन को सफल बनाया होगा; न जाने कितनी सभ्यताएँ, संस्कृतियां और परम्पराएं महाकाल के विकराल महोदर में विलुप्त हो चुकी हैं और भगवान् महाकाल ने उनको आत्मसात् कर लिया है। वे सभी परम्पराएं आज विकृति को प्राप्त हो चुकी है, परन्तु गुरु-शिष्य-परम्परा की और ध्यान डालने से या चिंतन करने से इस पुनीत परम्परा का एक ऐसा सुन्दर, सात्त्विक और पुनीत दर्शन होता है, मानो यह पवित्र परम्परा अक्षरपुरुष भगवान् की मानवमात्र के लिए अद्भुत सौगात है, जो आज भी भटके हुए मानव को है किसी न किसी रूप में मार्गदर्शन करा रही है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि मानव ने अपने अनुभव, श्रम और पारस्परिक सहयोग से बहुत कुछ सीखा है, परन्तु उस अनुभव और ज्ञान की परम्परा को यथावत् सुरक्षित रखने में गुरु-शिष्य-परम्परा ही सक्षम रही है। इसी परम्परा ने

www.ignited.in

मानव-जाति के ज्ञान और अनुभव को भावी पीढ़ियों तक पहुँचाने के लिए अपने कर्तव्य का निर्वाह किया है । देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार इस परम्परा का किसी भी नाम और रूप में प्रचलन होता रहा हो, परन्तु यह परम्परा है सनातन! क्योंकि वैदिक साहित्य से लेकर आज तक जितने भी ग्रंथ मानव द्वारा पढ़े जाते रहे हैं, सभी में इस पद्धति का वर्णन मिलता है। सम्पूर्ण वैदिक वाड्मय और वैदिक परम्परा की तो इस गुरु-शिष्य-परम्परा के बिना कल्पना भी नहीं की जा सकती। हाँ-आचार्य शब्द का प्रयोग निरुक्तशास्त्रकार ने इस रूप में किया हैः आचार्यः कस्मात् ? आचार्य आचारं ग्राहयति। अचिनोत्यर्थान् आचिनोति बुद्धिमिति वा। आचार्य इसलिए कहते हैं कि क्योंकि यह विद्यार्थी को आचरण सिखाता है, विद्यार्थी को सूक्ष्म से सूक्ष्म पदार्थो का दर्शन कराता है, चूंकि आचार्य शिष्य की बुद्धि का संचय करता है, उसकी बुद्धि बढ़ाता है, अतः उसे आचार्य कहते हैं।

पौराणिक साहित्य में भी भगवान् परशुराम के शिष्यों की लम्बी सूची है। वर्तमान साहित्य में गुरु-शिष्य-परम्परा का उसी प्रकार निर्वाह किया जाता है, किन्तु दुर्भाग्य से इस पुनीत परम्परा का वह आदर नहीं रहा-जो हम प्राचीन साहित्य में पढ़ते हैं। प्राचीन साहित्य में तो गुरु को साक्षात् परब्रह्म की उपाधि से विभूषित किया गया है।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।

गुरुः साक्षात् परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

इत्यादि श्लोक गुरु की महत्ता पर प्रकाश डालते है। अंग्रेजी की एक कहावत का हिन्दी रूपान्तर यहाँ देना उचित होगा कि अध्यापक वह दीपक है जो स्वयं जलकर दूसरों को प्रकाश देता है। गोस्वामी तुलसीदास ने भी "वन्दौ गुरुपद" इत्यादि वाक्य कहकर सदा अपने गुरु के चरणकमलों का स्मरण किया है तथा महात्मा कबीर का तो सम्पूर्ण साहित्य ही गुरुमय है। जिन्होंने "बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दियो मिलाय" कहकर गुरु के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त की है। उन्होंने तो यहां तक कहा है-

"शीश दिए गुरु मिले, तो भी सस्ता जान।"

एकलव्य की गुरुभक्ति का उदाहरण कौन भूल सकता है? परन्तु समय के प्रभाव के कारण आज इस पुण्यमयी परम्परा के मूल्यों का ह्रास हो रहा है। सत्त्वगुणी वृत्तियों के स्थान पर तमोगुणी व रजोगुणी वृत्तियाँ समाज में स्वार्थ के लिए इस सनातन परम्परा का प्रयोग कर आम जनता के श्रद्धा व विश्वास का दोहन कर रही हैं। कुकुरमुत्तों की तरह गुरुओं के सम्प्रदाय ही सम्प्रदाय उदित हो रहे हैं, जिससे उन पवित्र व सनातन मूल्यों का अपमान हो रहा है। आज हमारे द्वारा इस अंधविश्वास और वैचारिक प्रदूषण, जो भ्रष्ट गुरुओं द्वारा फैलाया जा रहा है, उसे रोकने की आवश्यकता है। हम सबका यह पुनीत कर्तव्य बनता है कि हम उन मूल्यों को भी स्मरण करें, जिनके आधार पर यह परम्परा आज भी अपना अस्तित्व बताए हुए है।

यद्यपि आज का शिक्षक प्रतिभा की दृष्टि से प्राचीन काल के तपोमय जीवन व्यतीत करने वाले सर्वस्वत्यागी समर्पित गुरुओं के समकक्ष नहीं ठहर सकता तथापि शिक्षक का पद पा लेने पर अपनी योग्यता और ज्ञानपरिधि को विस्तृत करने का प्रयास प्रत्येक अध्यापक को करना ही चाहिए। केवल अध्यापक पद पर नियुक्ति पाकर स्वयं को कृतकृत्य नहीं समझ लेना चाहिए। इसी प्रकार के शिक्षकों के प्रति महाकवि कुलगुरु कालिदास का निर्देश है-

लब्धास्पदोऽरमीति विवादभीरो -

स्तितिक्षमाणस्य परेण निन्दाम्।

यस्यागमः केवलं जीविकायै

तं ज्ञानपण्यं वणिजं वदन्ति।।

अर्थात् 'मैं अध्यापक पद प्राप्त कर चुका हूँ।' इस भावना से शास्त्रार्थ से पलायन करने वाले तथा दूसरों द्वारा की गई निन्दा को सहन करने वाले तथा केवल आजीविका के लिए ही विद्या देने वाले (व्यक्ति) को ज्ञान बेचने वाला वणिक् कहा जाता है ।

गुरु उस कुम्भकार के समान होता है जो घड़े के नीचे हाथ देकर उसे थपकी मारता है और सुन्दर बनाता है। गुरु भी शिष्य के हृदय में प्रविष्ट होकर उसकी आत्मा को सहारा देकर, कठोर वचनों की ताडना देकर उसे सर्वथा निर्दोष बनाकर ज्ञानगरिमा से मण्डित कर देता है। नीतिकार भर्तृहरि ने कहा है कि

गीर्भिर्गुरूणां परुषाक्षराभि-

स्तिरस्कृता यान्ति नरा महत्त्वम्।।

अर्थात् गुरु के कटु और तीक्ष्ण वाग्बाणों से तिरस्कृत होने पर ही मानव का महत्त्व बढ़ता है। गुरु का स्थान मनुष्यों में नहीं, देवों में भी विशिष्ट है। कहा भी गया है- 'शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन।' अर्थात् ईश्वर के रुष्ट हो जाने पर गुरु संभाल कर सकता है, परन्तु यदि गुरु अप्रसन्न हो

www.ignited.in

जाए तो ईश्वर भी सहायता नहीं कर सकता। अनेक सन्तों ने भी गुरु की महत्ता का वर्णन अनेक प्रकार से किया है।

कुम्भकार की भाँति गुरु जैसा चाहे, उसका बर्तन बना दे। उस समय गुरु के हाथ में अपारशक्ति होती है। वह शिष्य को किसी भी दिशा में प्रवृत्त कर सकता है। यह गुरु पर निर्भर है कि वह शिष्य को किस साँचे में ढाले, उसे किस रंग में रंगे। गुरु के हाथों से ही व्यास, शुक्र, शिवाजी, प्रताप, गाँधी, नेहरू जैसी महान् विभूतियों का निर्माण हुआ है। तिलक, गोखले, राजेन्द्र, राधाकृष्णन् जैसे देशरत्न अच्छे गुरुओं की ही देन है। वर्तमान परिवेश में प्राचीनकाल के गुरु-गौरव की ओर गंभीरता से झाँकने की आवश्यकता है। तभी हमारा राष्ट्र विश्व में जगद्गुरु के रूप में पुनः प्रतिष्ठित हो सकेगा।

संदर्भ सूची

बालकृष्ण विरचितम, (रामकृष्ण परमहंस दिव्य चरितम्)

धर्मपाल शास्त्री (स्वामी बालकृष्ण भारद्वाज की जीवनी)

धर्मपाल शास्त्री (गीता सुधानिधि)

विवेकानन्द साहित्य (दशम खंड)

जयराम संदेश त्रैमासिक पत्रिका, वर्ष -3, अंक - 8

विवेकानन्द साहित्य (नवम खण्ड)

Corresponding Author

Dr. Parveen Kumar*

Assistant Professor, D.A.V. College, Pehowa, Kurukshetra